बिहार राज्य

बनाम

हीरालाल केजरीवाल एवं एक अन्य

14 सितंबर, 1959

(सैयद जाफ़र इमाम और के. सुब्बा राव, न्यायमूर्तिगण)

विधि का निरसन — व्यावृति खंड — की व्याख्या — सूती कपड़ा (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948, क्या लागू बना रहता है — आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 (1946 का XXIV), धाराएं 1(3) और 3(1) — आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955 (1955 का अध्यादेश I), धारा 16 — आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का X), धारा 16।

विशेष अनुमति द्वारा अपील — इसमें हस्तक्षेप — भारत का संविधान, अनुच्छेद 136।

आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 की धारा 3 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केंद्र सरकार ने सूती वस्त्र (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948 बनाया। 1946 का अधिनियम 26 जनवरी, 1955 को समाप्त होने वाला था, लेकिन उससे पहले, 21 जनवरी, 1955 को, आवश्यक वस्तु अध्यादेश प्रख्यापित किया गया, जिसने केंद्र सरकार को 1946 के अधिनियम की धारा 3 द्वारा प्रदत्त शक्ति के समान ही शक्ति प्रदान की। अध्यादेश की धारा 16 में यह प्रावधान किया गया था कि 1946 के अधिनियम के तहत किए गए सभी आदेश, जहाँ तक ऐसे आदेश इस अध्यादेश के तहत किए जा सकते थे, प्रभावी बने रहेंगे और तदनुसार ऐसे किसी भी आदेश के तहत की गई कोई भी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किया गया कोई निर्देश प्रभावी बना रहेगा। आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 ने अपनी धारा 16(1)(ए) द्वारा अध्यादेश को निरस्त कर दिया और धारा 16(1)(बी) द्वारा किसी भी राज्य में लागू किसी भी अन्य विधि को उस सीमा तक निरस्त कर दिया, जहाँ तक वह विधि किसी आवश्यक वस्तु के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण, तथा व्यापार और वाणिज्य को नियंत्रित करता था। 1955 के अधिनियम की धारा 16(2) का

व्यावृत्ति खंड, अध्यादेश की धारा 16 की ही पुनरावृत्ति था। उत्तरदाता ने यह तर्क दिया कि अध्यादेश की धारा 16 के पहले भाग की व्यापकता को इसके दूसरे भाग द्वारा सीमित कर दिया गया था, और परिणामस्वरूप धारा 16 ने आदेश को सुरक्षित नहीं रखा बल्कि केवल उस आदेश के तहत किए गए कार्यों को सुरक्षित रखा। साथ ही, यह भी तर्क दिया गया कि यदि आदेश को अध्यादेश की धारा 16 द्वारा सुरक्षित मान भी लिया जाए, तो भी इसे 1955 के अधिनियम की धारा 16(1)(बी) द्वारा निरस्त कर दिया गया था और उस अधिनियम के तहत इसे जारी नहीं रखा गया था।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि सूती वस्त्र (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948 अध्यादेश की धारा 16 द्वारा सुरक्षित था और आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 16(2) द्वारा जारी रखा गया था, और 30 अगस्त, 1955 को, जब अपराध किया गया था, वह प्रभावी था। अध्यादेश की धारा 16 के पहले भाग ने आदेश को और अध्यादेश के लागू होने के पश्चात उस आदेश के तहत किए गए कार्यों को सुरक्षित रखा, तथा धारा 16 के दूसरे भाग ने अध्यादेश के लागू होने से पूर्व उस आदेश के तहत किए गए पिछले कार्यों को सुरक्षित रखा। 1955 के अधिनियम की धारा 16(1)(बी) में प्रयुक्त "कोई अन्य विधि" शब्दों का अर्थ अध्यादेश के अतिरिक्त किसी अन्य विधि से था, और अध्यादेश के तहत किए गए या किए गए समझे जाने वाले किसी आदेश को धारा 16(1)(बी) द्वारा निरस्त नहीं किया गया था। ऐसा आदेश अधिनियम की धारा 16(1)(ए) द्वारा सुरक्षित था।

यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि उत्तरदाता को उन्मोचित करने वाले उच्च न्यायालय के आदेश में संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत हस्तक्षेप करने के लिए यह एक उपयुक्त मामला नहीं था। अपराध चार वर्ष से अधिक समय पहले किया गया था; सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने के लिए उपयुक्तता प्रमाण पत्र हेतु अपीलकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय में दिया गया आवेदन विलंबित था; न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए भिन्न-भिन्न विचारों के आलोक में अभियुक्त के इस विश्वास के लिए एक तर्कसंगत औचित्य था कि 1946 के

अधिनियम की समाप्ति के बाद वह आदेश प्रभावी नहीं रहा था; राज्य ने संभवतः कानूनी स्थिति को स्पष्ट करने के लिए यह अपील दायर की थी; ऐसी परिस्थितियों में लोकहित में यह आवश्यक नहीं था कि इस पुराने मामले को पुनर्जीवित किया जाए।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या 36, वर्ष 1958

पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक संदर्भ संख्या 51 (वर्ष 1957) और आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 323 (वर्ष 1957) में पारित दिनांक 9 मई, 1957 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा अपील; जो प्रथम अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, पटना के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 14 (वर्ष 1957) में पारित दिनांक 20 मार्च, 1957 के निर्णय और आदेश से उद्भूत है।

अपीलकर्ता की ओर सेः *के. पी. वर्मा* और *आर. सी. प्रसाद*।

उत्तरदाताओं की ओर सेः *एच. जे. उमरीगर* और *बी. पी. माहेश्वरी*।

14 सितंबर, 1959। न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुब्बा राव द्वारा सुनाया गया—

यह बिहार राज्य द्वारा पटना उच्च न्यायालय के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति अपील है, जिसमें मुंसिफ-दंडाधिकारी, पटना के न्यायालय में उत्तरदाताओं के विरुद्ध संस्थित आपराधिक कार्यवाही को अभिखंडित कर दिया गया था।

दोनों उत्तरदाता मेसर्स पटना टेक्सटाइल्स नामक एक फर्म के स्वामी थे, जो पटना में सूती कपड़े का व्यवसाय करती थी। 30 अगस्त, 1955 को, उन्होंने बिहार के वस्त्र नियंत्रक से परमिट प्राप्त किए बिना, पटना घाट से बलिया के कपड़ा व्यापारी मेसर्स हीरालाल बासुदेव प्रसाद को साड़ियों की दो गांठें भेजीं। उन पर मुंसिफ-दंडाधिकारी, पटना के न्यायालय में आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का X) (जिसे इसके बाद 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 7, और उसके साथ पठित सूती वस्त्र (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948 (जिसे इसके बाद आदेश कहा गया है) की धारा 3 के तहत मुकदमा चलाया गया। उत्तरदाताओं ने उक्त मुंसिफ-दंडाधिकारी के समक्ष इस आधार पर अपने उन्मोचन के लिए एक याचिका दायर की

कि आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 (1946 का XXIV) (जिसे इसके बाद '1946 का अधिनियम' कहा गया है), जिसके तहत उक्त आदेश बनाया गया था, निरस्त किया जा चुका था, और इसलिए, उस आदेश की कानूनी वैधता समाप्त हो गई थी, और परिणामस्वरूप उन पर उस कालातीत आदेश के तहत मुकदमा नहीं चलाया जा सकता था। मुंसिफ-दंडाधिकारी ने उस याचिका को खारिज कर दिया। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, पटना ने अभिलेखों का अवलोकन करने के बाद उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत उच्च न्यायालय को इस राय के साथ प्रेषित किया कि मुंसिफ-दंडाधिकारी का आदेश गलत था और इसलिए, मुंसिफ-दंडाधिकारी को अभियुक्तों को उन्मोचित करने के निर्देश के साथ उस आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए। उत्तरदाताओं ने भी मुंसिफ-दंडाधिकारी के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में एक पुनरीक्षण याचिका दायर की। पटना उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति इमाम द्वारा संदर्भ और पुनरीक्षण दोनों पर एक साथ सुनवाई की गई, और विद्वान न्यायाधीश ने संदर्भ तथा पुनरीक्षण को स्वीकार करते हुए मुंसिफ-दंडाधिकारी के आदेश को अपास्त कर दिया और अभियुक्तों को उन्मोचित करने का निर्देश दिया। इसी के परिणामस्वरूप यह अपील हुई।

राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि 1946 के अधिनियम के तहत बनाया गया आदेश, आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955 (जिसे इसके बाद 'अध्यादेश' कहा गया है) की धारा 16 और अधिनियम की धारा 16(2) के तहत सुरक्षित था, और इसलिए, अभियुक्तों पर उस आदेश के प्रावधानों के तहत वैध रूप से मुकदमा चलाया गया था। उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि उक्त दोनों धाराओं में से किसी के भी तहत वह आदेश सुरक्षित नहीं था।

पक्षकारों के तर्कों को समझने के लिए, 1946 के अधिनियम, आदेश, अध्यादेश और अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों पर ध्यान देना आवश्यक है।

आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946:

धारा 1(3): यह (अधिनियम) छब्बीस जनवरी, 1955 को प्रभावी नहीं रहेगा, उन बातों को छोड़कर जो उस तारीख से पहले की गई हों या जिन्हें करने का लोप किया गया हो; और इस अधिनियम की समाप्ति पर साधारण खंड अधिनियम, 1897 (1897 का X) की धारा 6 इस प्रकार लागू होगी मानो इसे तब किसी केंद्रीय अधिनियम द्वारा निरसित किया गया हो।

धारा 3(1): केंद्र सरकार, जहाँ तक उसे किसी आवश्यक वस्तु की आपूर्ति बनाए रखने या बढ़ाने के लिए, या उनके न्यायसंगत वितरण और उचित कीमतों पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत होता है, आदेश द्वारा उसके उत्पादन, आपूर्ति और वितरण तथा उसमें व्यापार और वाणिज्य के विनियमन या प्रतिषेध का प्रावधान कर सकती है।

सूती वस्त्र (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948।

धारा 3: कोई भी व्यक्ति रेल, सड़क, वायु, समुद्र या अंतर्देशीय जलमार्ग द्वारा किसी भी कपड़े, सूत या परिधान का परिवहन नहीं करेगा और न ही परिवहन करवाएगा, सिवाय इसके कि वह निम्नलिखित के अधीन और उसके अनुसार हो—

(i) वस्त्र आयुक्त द्वारा भारत के राजपत्र में अधिसूचित एक सामान्य परमिट; या

(ii) वस्त्र आयुक्त द्वारा जारी एक विशेष परिवहन परमिट।

आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955

प्रस्तावना: "चूँकि आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 (1946 का XXIV), जो कुछ वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण तथा उनमें व्यापार और वाणिज्य को नियंत्रित करने की शक्तियाँ प्रदान करता है, 26 जनवरी, 1955 को समाप्त हो रहा है; .... , अतः राष्ट्रपति महोदय निम्नलिखित अध्यादेश प्रख्यापित करते हैं:"

धारा 16: आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 (1946 का XXIV) के अधीन किया गया या किया गया समझा जाने वाला कोई भी आदेश, जो इस अध्यादेश के प्रारंभ होने से ठीक पहले प्रभावी था, जहाँ तक ऐसा आदेश इस अध्यादेश के अधीन किया जा सकता है, इस अध्यादेश के अधीन किया गया समझा जाएगा और प्रभावी बना रहेगा; और तदनुसार ऐसे किसी आदेश के अधीन की गई कोई भी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किया गया कोई भी निर्देश, जो ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रभावी था, तब तक प्रभावी बना रहेगा जब तक कि उसे इस अध्यादेश के अधीन की गई किसी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किए गए निर्देश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिया जाता।

यह अध्यादेश 21 जनवरी, 1955 को भारत के राजपत्र में प्रकाशित किया गया था और 26 जनवरी, 1955 को लागू हुआ।

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955।

धारा 3 (1): यदि केंद्र सरकार की यह राय है कि किसी आवश्यक वस्तु की आपूर्ति बनाए रखने या बढ़ाने के लिए, या उनका न्यायसंगत वितरण और उचित कीमतों पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, तो वह आदेश द्वारा उसके उत्पादन, आपूर्ति और वितरण तथा उसमें व्यापार और वाणिज्य के विनियमन या प्रतिषेध का प्रावधान कर सकती है।

धारा 7 (1): यदि कोई व्यक्ति धारा 3 के अधीन किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करता है—

(क) वह दंडनीय होगा—

(i) उस धारा की उपधारा (2) के खंड (एच) या खंड (आई) के संदर्भ में किए गए किसी आदेश के मामले में, कारावास से, जिसकी

अवधि एक वर्ष तक हो सकती है और वह जुर्माने का भी दायी होगा, तथा

(ii) किसी अन्य आदेश के मामले में, कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक हो सकती है और वह जुर्माने का भी दायी होगा:

परंतु यह कि यदि न्यायालय की यह राय है कि केवल जुर्माने का दंड ही न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पर्याप्त होगा, तो वह दर्ज किए जाने वाले कारणों के आधार पर, कारावास का दंड देने से बच सकता है; . . . . . .

धारा 16 (1): निम्नलिखित विधियाँ एतद्द्वारा निरसित की जाती हैं:-

(क) आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955;

(बी) इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले किसी भी राज्य में लागू कोई अन्य विधि, जहाँ तक ऐसी विधि किसी आवश्यक वस्तु के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण, तथा उसमें व्यापार और वाणिज्य को नियंत्रित करती है या नियंत्रण के लिए प्राधिकृत करती है।

(2): ऐसे निरसन के बावजूद, एतद्द्वारा निरसित किसी भी विधि के अधीन किसी भी प्राधिकारी द्वारा किया गया या किया गया समझा जाने वाला कोई भी आदेश, जो इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले प्रभावी था, जहाँ तक ऐसा आदेश इस अधिनियम के अधीन किया जा सकता है, इस अधिनियम के अधीन किया गया समझा जाएगा और प्रभावी बना रहेगा; और तदनुसार ऐसे किसी आदेश के अधीन की गई कोई भी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किया गया कोई निर्देश, जो ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रभावी था, तब तक प्रभावी बना रहेगा जब तक कि उसे इस अधिनियम के अधीन की गई किसी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किए गए निर्देश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिया जाता।

(3): उपधारा (2) के प्रावधान साधारण खंड अधिनियम, 1897 (1897 का X) की धारा 6 में निहित प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होंगे, जो उपधारा (1) में संदर्भित अध्यादेश या अन्य विधि के निरसन पर भी उसी प्रकार लागू होंगे मानो ऐसा अध्यादेश या अन्य विधि एक अधिनियमिति हो।

उक्त प्रावधानों को संक्षेप में इस प्रकार सारांशित किया जा सकता है: 1946 के अधिनियम के तहत, केंद्र सरकार के पास आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण को विनियमित या प्रतिबंधित करने के लिए आदेश पारित करने की शक्ति थी। उस अधिनियम में स्वयं यह प्रावधान था कि वह 26 जनवरी, 1955 को प्रभावी नहीं रहेगा। उक्त अधिनियम की धारा 3 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केंद्र सरकार ने सूती वस्त्र (परिवहन नियंत्रण) आदेश, 1948 बनाया, जो अन्य बातों के साथ-साथ किसी भी व्यक्ति को वस्त्र आयुक्त के परमिट के बिना कपड़े के परिवहन से प्रतिबंधित करता था। अधिनियम के निष्प्रभावी होने से पहले, अर्थात् 26 जनवरी, 1955 से पूर्व, 21 जनवरी, 1955 को अध्यादेश प्रख्यापित किया गया था, जिसने केंद्र सरकार को 1946 के अधिनियम की धारा 3 के तहत प्रदत्त शक्ति के समान शक्ति प्रदान की। उक्त अध्यादेश में 1946 के अधिनियम के तहत किए गए कुछ कार्यों के संबंध में व्यावृत्ति खंडों का भी प्रावधान किया गया था। 1 अप्रैल, 1955 को अधिनियम पारित किया गया, जिसमें व्यावहारिक रूप से अध्यादेश के उन्हीं प्रावधानों को पुनः अधिनियमित किया गया, और उसके तहत 1946 के अधिनियम की धारा 3 तथा अध्यादेश की धारा 3 के तहत केंद्र सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति को सुरक्षित रखा गया। अधिनियम में निरसन और व्यावृत्ति का भी प्रावधान किया गया। अतः प्रश्न यह है कि अपराध किए जाने की तिथि पर, वह आदेश जिसके तहत अभियोजन शुरू किया गया था, अस्तित्व में था या उसका अस्तित्व समाप्त हो गया था। यह एक सर्वमान्य कानूनी स्थिति है कि किसी अधिनियम के तहत बनाया गया आदेश उस अवधि की समाप्ति के बाद अपनी कानूनी शक्ति खो देता है जिसके लिए वह अधिनियम बनाया गया था। लेकिन यह तर्क दिया

गया है कि अध्यादेश और अधिनियम द्वारा प्रदान किए गए व्यावृत्ति खंडों के कारण वह आदेश, 1946 के अधिनियम की समाप्ति के बाद भी बना रहा। सामान्यतः, उस आदेश को 26 जनवरी, 1955 को समाप्त हो जाना चाहिए था। जब तक इसे अध्यादेश की धारा 16 द्वारा सुरक्षित नहीं किया जाता, अधिनियम का व्यावृत्ति खंड इस पर प्रभावी नहीं हो सकता था। इसलिए, हम इस प्रश्न पर दो पहलुओं से विचार करेंगे: (i) क्या अध्यादेश की धारा 16 ने आदेश के प्रवर्तन को सुरक्षित रखा; और (ii) यदि इसने इसे सुरक्षित रखा, तो क्या अधिनियम की धारा 16(2) ने इसे आगे विस्तार प्रदान किया।

अध्यादेश की धारा 16 दो भागों में है। पहले भाग के तहत, "आवश्यक वस्तुएँ (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 के अधीन किया गया या किया गया समझा जाने वाला कोई भी आदेश, जो इस अध्यादेश के प्रारंभ होने से ठीक पहले प्रभावी था, जहाँ तक ऐसा आदेश इस अध्यादेश के अधीन किया जा सकता है, इस अध्यादेश के अधीन किया गया समझा जाएगा और प्रभावी बना रहेगा।" धारा 16 के इस भाग के प्रवर्तन के लिए आवश्यक शर्त का स्वीकार्य रूप से पालन किया गया है। 1946 के अधिनियम की धारा 3 के तहत बनाया गया आदेश, अध्यादेश की धारा 3 के तहत बनाया जा सकता है; और यदि ऐसा है, तो धारा के स्पष्ट शब्दों के कारण, उस आदेश को अध्यादेश के अधीन किया गया समझा जाना चाहिए और इसके प्रख्यापन के बाद भी इसे प्रभावी बना रहना चाहिए। लेकिन यह कहा गया है कि धारा का दूसरा भाग पहले भाग में प्रयुक्त शब्दावली की व्यापकता को कम या सीमित करता है। यह उल्लेख करने के बाद कि उक्त आदेश प्रभावी बना रहेगा, दूसरे भाग में आगे कहा गया है कि "और तदनुसार ऐसे किसी आदेश के अधीन की गई कोई भी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किया गया कोई निर्देश, जो ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रभावी था, तब तक प्रभावी बना रहेगा जब तक कि उसे इस अध्यादेश के अधीन की गई किसी नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किए गए निर्देश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिया जाता।" तर्क यह दिया गया है कि यदि आदेश प्रभावी बना रहता है,

तो धारा का दूसरा भाग निरर्थक हो जाता है, क्योंकि उस आदेश के तहत की गई नियुक्ति, प्रदान की गई अनुज्ञप्ति या परमिट, या जारी किया गया निर्देश स्वतः ही प्रभावी बना रहता है, और इसलिए धारा 16 के दूसरे भाग को अधिनियमित करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। विसंगति तब भी उत्पन्न होती है यदि इस तर्क को स्वीकार कर लिया जाए, क्योंकि उस स्थिति में पहला भाग अनावश्यक हो जाता है: वही परिणाम केवल धारा 16 के दूसरे भाग को अधिनियमित करके और पहले भाग को पूरी तरह से छोड़कर भी प्राप्त किया जा सकता है। किसी धारा के अर्थ का निर्धारण करने के लिए उसके किसी भी भाग को छोड़ देना अनुमेय नहीं है: पूरी धारा को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और दोनों भागों के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। धारा के पहले भाग के प्रावधानों में कोई संदिग्धता नहीं है। स्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में, यह अधिनियम के निरसन के बावजूद आदेश के प्रभावी बने रहने का प्रतिपादन करता है; इसके बाद, यह उस आदेश के तहत किए गए कुछ पिछले कार्यों को सूचीबद्ध करता है, जो अध्यादेश के प्रारंभ होने से ठीक पहले प्रभावी थे और कहता है कि वे आदेश के जारी रहने के परिणामस्वरूप प्रभावी बने रहेंगे। "तदनुसार" शब्द, जिसका अर्थ परिणामस्वरूप है, यह इंगित करता है कि सूचीबद्ध कार्य तब तक प्रभावी नहीं रहेंगे जब तक कि स्वयं आदेश जारी न रहे: वे आदेश के निरंतर रहने पर निर्भर हैं। यह कहा जाता है कि यह व्याख्या विधायिका पर पुनरुक्ति का आरोप लगाती है, और इसलिए इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। धारा की सूक्ष्म जांच से पता चलता है कि दूसरा भाग वास्तव में वैसा अनावश्यक नहीं है, जैसा कि वह प्रथम दृष्टया प्रतीत होता है। अध्यादेश की धारा 16 के तहत, 1946 के अधिनियम के तहत बनाया गया आदेश तब तक प्रभावी बना रहता है जब तक कि अध्यादेश के तहत कोई अन्य आदेश न बना दिया जाए। यह दो अवधियों को समाहित करता है: (i) अध्यादेश के प्रारंभ होने की तिथि तक की अवधि; और (ii) उसके बाद की अवधि। पहला भाग उस आदेश को जीवन प्रदान करता है, और इसलिए, उस आदेश के तहत अधिकृत कार्य अध्यादेश के लागू होने के पश्चात किए जा

सकते हैं। लेकिन यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या उस आदेश के तहत किए गए पिछले कार्यों को आदेश के जारी रहने मात्र से ही सुरक्षा प्राप्त हो जाती है, या क्या पहले से किए गए कार्य "आदेश प्रभावी बना रहेगा" इन शब्दों के दायरे में आते हैं। प्रतीत होता है कि धारा का दूसरा भाग इस कठिनाई से बचने के लिए, या कम से कम, किसी भी संशय को दूर करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया था। इस धारा के तहत आदेश और उस आदेश के तहत पूर्व में किए गए कार्य, दोनों ही सुरक्षित हैं। यदि ऐसा है, तो इसका निष्कर्ष यह निकलता है कि आदेश सुरक्षित था और आदेश द्वारा अधिकृत अभियोजन, अध्यादेश के प्रभावी होने के बाद वैध रूप से शुरू किया जा सकता था।

इसके बावजूद, यह तर्क दिया गया है कि अध्यादेश की धारा 16 द्वारा सुरक्षित आदेश उस अध्यादेश के निरसन के साथ ही समाप्त हो गया और अधिनियम के तहत जारी नहीं रहा। यह तर्क अधिनियम की धारा 16(1) और (2) के प्रावधानों पर आधारित है। धारा 16 की तीन उपधाराएं हैं। वर्तमान तर्क के लिए हमारा सरोकार धारा 16 की केवल उपधारा (1) और (2) से है। उपधारा (2) अध्यादेश की धारा 16 की ही पुनरावृत्ति है। लेकिन यह कहा गया है कि अधिनियम की धारा 16(1)(बी) यह संकेत देती है कि उस धारा के तहत आदेश को सुरक्षित नहीं किया गया था। धारा 16(1)(ए) के तहत, आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955 को निरस्त किया गया है, और धारा 16(1)(बी) के तहत 'इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पहले किसी राज्य में लागू कोई अन्य विधि, जहाँ तक ऐसी विधि किसी आवश्यक वस्तु के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण, तथा व्यापार और वाणिज्य को नियंत्रित करती है या नियंत्रण हेतु प्राधिकृत करती है' को भी निरस्त किया गया है। तर्क यह है कि धारा 16(1) के खंड (बी) में प्रयुक्त 'कोई अन्य विधि' शब्दों के अंतर्गत वह आदेश भी समाहित है, और इसलिए, जब उस आदेश को धारा 16(1) के खंड (बी) के तहत निरस्त कर दिया गया है, तो यह मानना अनुचित होगा कि उसे धारा 16 की उपधारा (2) के तहत बहाल किया गया है। दूसरे

शब्दों में, विधायिका के प्रति ऐसी मंशा आरोपित नहीं की जा सकती कि वह एक उपधारा के तहत किसी आदेश को निरस्त करे और दूसरी उपधारा द्वारा उसे पुनर्जीवित या बहाल कर दे। यदि हम ऐसा कह सकें, तो इस तर्क में एक बुनियादी दोष है। धारा 16(1)(बी) में प्रयुक्त "कोई अन्य विधि" शब्दों का अर्थ केवल धारा 16(1)(ए) में उल्लिखित 'आवश्यक वस्तु अध्यादेश, 1955' के अतिरिक्त किसी अन्य विधि से ही हो सकता है। यह स्वीकार्य तथ्य है कि कई राज्यों में उक्त अध्यादेश के अलावा अन्य ऐसी विधियाँ लागू हैं जो आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण को नियंत्रित करती हैं। वस्तु अध्यादेश, 1955 के तहत बनाए गए या बनाए गए समझे जाने वाले किसी आदेश को उस 'आवश्यक वस्तु अध्यादेश' (जिसके तहत वह बनाया गया है) से भिन्न किसी 'अन्य विधि' के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता। ऐसा आदेश स्वयं धारा 16(1) के खंड (ए) के अंतर्गत ही समाहित है, और इसलिए, उसके खंड (बी) का इस पर कोई अनुप्रयोग नहीं होता। इस दृष्टिकोण से, अधिनियम की धारा 16 की उपधारा (2) की कोई ऐसी व्याख्या नहीं की जा सकती जो अध्यादेश की धारा 16 के प्रावधानों पर हमारे द्वारा दी गई व्याख्या से भिन्न हो। अध्यादेश की धारा 16 के प्रावधानों के निर्वचन में दिए गए कारणों के आधार पर, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि धारा 16(2) के तहत वह आदेश और उसके दूसरे भाग में सूचीबद्ध कार्य, दोनों ही अध्यादेश की समाप्ति के बाद भी अस्तित्व में बने रहे और अधिनियम के तहत प्रभावी रहे। उपरोक्त कारणों से, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अभियुक्तों के विरुद्ध उस आदेश की धारा 3 के तहत अभियोजन वैध रूप से शुरू किया गया था।

इसके बावजूद, उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किए जाने के लिए यह एक उपयुक्त मामला नहीं है। यह अभिकथित है कि अपराध 30 अगस्त, 1955 को, अर्थात चार वर्ष से अधिक समय पहले किया गया था। न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए भिन्न-भिन्न विचार यह दर्शाते हैं कि अभियुक्तों के इस उचित विश्वास के लिए एक तर्कसंगत औचित्य था कि 1946

के अधिनियम की अवधि समाप्त होने के बाद वह आदेश प्रभावी नहीं रहा था। सर्वोच्च न्यायालय में अपील की अनुमति हेतु आवेदन को खारिज करने वाला उच्च न्यायालय का आदेश यह दर्शाता है कि वह पटना उच्च न्यायालय के नियमों के नियम 28 के प्रावधानों के उल्लंघन में दायर किया गया था। उक्त नियमों के तहत, निर्णय सुनाए जाने के तुरंत बाद आवेदन दायर किया जाना चाहिए था। उस आवेदन के समर्थन में दायर शपथ-पत्र में ऐसा न करने का एकमात्र कारण यह दिया गया था कि अपीलकर्ता ने आवश्यक निर्देश नहीं दिए थे। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने सही तौर पर उस कारण को बाद के चरण में आवेदन दायर करने की अनुमति देने के लिए पर्याप्त आधार के रूप में स्वीकार नहीं किया। इस न्यायालय में दायर विशेष अनुमति याचिका में, यद्यपि यह बताया गया था कि प्रमाण-पत्र के लिए उच्च न्यायालय में दायर आवेदन खारिज कर दिया गया था, किंतु उस अस्वीकृति का कारण प्रकट नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त, राज्य ने संभवतः कानूनी स्थिति को स्पष्ट करने के उद्देश्य से यह अपील दायर की थी। हमारा यह भी मानना है कि लोकहित में यह आवश्यक नहीं है कि इस पुराने मामले को पुनर्जीवित किया जाए। ऐसी परिस्थितियों में, हमारे लिए अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग न करना न्यायोचित होगा, और तदनुसार हम इस अपील को खारिज करते हैं।

अपील खारिज।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।